

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 10 अध्याय 22 — गोपियों का वस्त्रहरण

5 October 2026



हेमन्त के एक मास तक ब्रज की कुमारियाँ यमुना-तट पर एक ही प्रार्थना लिए देवी कात्यायनी की आराधना करती हैं — और जिस दिन व्रत पूरा होता है, वे प्रभु, जिन्हें उन्होंने माँगा था, उनके वस्त्र लेकर कदम्ब पर चढ़ जाते हैं और उनकी लालसा को वरदान में बदल देते हैं।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में पुनः स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पवित्र कथाओं और शिक्षाओं की हमारी भक्तिमयी यात्रा। दशम स्कन्ध के इस बाईसवें अध्याय में शुकदेवजी राजा परीक्षित को कुमारियों का मासभर का कात्यायनी-व्रत, उसे अपनी लीलामय रीति से सफल करते श्रीकृष्ण, और ग्रीष्म में ग्वालबालों को दी गई परोपकारी वृक्षों की शिक्षा सुनाते हैं।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 10 (दशम स्कन्ध, पूर्वार्ध)
- अध्याय: 22 (द्वाविंश अध्याय)

- अध्याय शीर्षक: श्रीकृष्ण द्वारा कुमारी गोपियों का वस्त्रहरण
- मुख्य वक्ता: श्री शुकदेव गोस्वामी (राजा परीक्षित को सुनाते हुए); भीतर श्रीकृष्ण गोपियों और ग्वालबालों से बोलते हैं
- मुख्य श्रोता: राजा परीक्षित
- मुख्य स्थल: व्रज में कालिन्दी (यमुना) का तट; बाद में वृन्दावन से दूर का ग्रीष्म-वन
- केंद्रीय विषय: गोपियों का कात्यायनी-व्रत; श्रीकृष्ण द्वारा वस्त्र लेना और लौटाना; उनके संकल्प पर प्रभु का वरदान; वृक्षों के परोपकारी जीवन की शिक्षा
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 10, अध्याय 22, श्लोक 1-38
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी संस्करण, दशम स्कन्ध, पूर्वार्ध)

पूर्व अध्याय का संदर्भ

इक्कीसवें अध्याय में, जब वृन्दावन पर शरद् उतरी, श्रीकृष्ण ने वन में वंशी बजाई और गोपियों ने उस वंशी से धन्य हुई हर वस्तु का गान किया — हरिणियाँ, प्रेम से थमी नदियाँ, छाया करता मेघ, वृक्ष और गोवर्धन। उनके हृदय पहले ही उनके थे; अब सबसे छोटी कुमारियाँ एक पवित्र व्रत से उन्हें पाना चाहती हैं।

देवी कात्यायनी का व्रत

शुकदेवजी ने पुनः कहना आरम्भ किया। हेमन्त ऋतु के पहले मास मार्गशीर्ष में नन्दव्रज की कुमारियों ने देवी कात्यायनी की पूजा का व्रत लिया और केवल हविष्यान्न — यज्ञ में अर्पण के योग्य सात्विक भोजन — ग्रहण करने लगीं। प्रतिदिन उषाकाल में वे कालिन्दी के जल में स्नान करतीं और तट की बालू से देवी की प्रतिमा बनातीं। वहाँ वे चन्दन, सुगन्धित पुष्प और मालाओं, बलि, धूप और दीपों, छोटी-बड़ी भेंटों तथा कोमल पल्लवों, फलों और अक्षत से उनकी अर्चना करतीं।

पूजा करते हुए प्रत्येक कुमारी धीरे-धीरे एक ही मन्त्र दोहराती, क्योंकि सबके हृदय में एक ही अभिलाषा थी।

कात्यायनि महामाये महायोगिन्यधिश्वरि ।

नन्दगोपसुतं देवि पतिं मे कुरु ते नमः ।

इति मन्त्रं जपन्त्यस्ताः पूजां चक्रुः कुमारिकाः ॥ ४ ॥

*kātyāyāni mahā-māye mahā-yoginy adhiśvari nanda-gopa-sutaṁ devi patiṁ me kuru te namaḥ
iti mantraṁ japantyaś tāḥ pūjāṁ cakruḥ kumārīkāḥ*

अर्थ: “हे कात्यायनि! हे भगवान् की महामाया! हे महायोगिनी, हे अधीश्वरी! हे देवि, नन्दगोप के पुत्र को मेरा पति बना दो। तुम्हें नमस्कार है।”

इस मन्त्र का जप करती हुई कुमारियों ने पूजा की। (स्कन्ध 10, अध्याय 22, श्लोक 4)

श्रीकृष्ण में चित्त लगाए कुमारियों ने पूरे एक मास यह व्रत किया और विधिपूर्वक भद्रकाली की आराधना करते हुए प्रार्थना की, “नन्दनन्दन हमारे पति हों।” वे ब्राह्ममुहूर्त में उठतीं, एक-दूसरी को नाम लेकर पुकारतीं, परस्पर बाँहें मिलाकर ऊँचे स्वर में श्रीकृष्ण का गान करती हुई प्रतिदिन कालिन्दी में स्नान करने जातीं।



मार्गशीर्ष मास भर ब्रज की कुमारियाँ उषाकाल में कालिन्दी में स्नान कर बालू की प्रतिमा में देवी कात्यायनी की पूजा करती हैं, प्रत्येक यह प्रार्थना करती हुई कि नन्दनन्दन उसके पति हों (श्लोक 1-6)।

प्रभु व्रत को सफल करने आते हैं

ऐसे ही एक दिन कुमारियाँ नदी पर आई, सदा की भाँति अपने वस्त्र तट पर रखे और श्रीकृष्ण का यश गाती हुई आनन्द से जल में क्रीड़ा करने लगीं। प्रभु उनके हृदय की बात जानते थे। योगेश्वरों के भी ईश्वर अपने सखाओं के साथ नदी पर पधारे — उनकी पूजा में विघ्न डालने नहीं, उसे फल तक पहुँचाने।

भगवांस्तदभिप्रेत्य कृष्णो योगेश्वरेश्वरः ।

वयस्यैरावृतस्तत्र गतस्तत्कर्मसिद्धये ॥ ८ ॥

bhagavāṁs tad abhipretya kṛṣṇo yogeśvareśvaraḥ vayasair āvṛtas tatra gatas tat-karma-siddhaye

अर्थ: उनका अभिप्राय जानकर योगेश्वरों के ईश्वर भगवान् श्रीकृष्ण अपने सखाओं से घिरे हुए वहाँ पधारे, ताकि उनके उस पूजा-कर्म को सिद्धि प्रदान करें। (स्कन्ध 10, अध्याय 22, श्लोक 8)

उनके वस्त्र समेटकर वे झट पास के कदम्ब पर चढ़ गए और हँसते हुए बालकों के बीच हास्यपूर्वक बोले: “अरी कुमारियो, यहाँ आओ और अपनी इच्छा से अपना-अपना वस्त्र ले लो। मैं सच कहता हूँ, यह परिहास नहीं, क्योंकि तुम व्रत से दुर्बल हो गई हो। मैंने पहले कभी झूठ नहीं कहा, ये बालक जानते हैं। एक-एक करके आओ या सब साथ, हे सुमध्यमाओ!”

जल में खड़ी कुमारियों को विनती

प्रभु का यह परिहास देखकर गोपियाँ प्रेम में डूब गई। लजाकर उन्होंने एक-दूसरी की ओर देखा, अधरों पर मुस्कान फूट पड़ी, पर वे बाहर न निकलीं। कण्ठ तक शीतल जल में डूबी, काँपती हुई, उनके परिहास से चित्त हरा जाने पर उन्होंने उत्तर दिया: “हे कृष्ण, हमारे साथ अन्याय न करो। हम जानती हैं कि तुम नन्दगोप के प्रिय पुत्र हो, सारे व्रज में प्रशंसित; हमारे वस्त्र दे दो, हम ठिठुर रही हैं। हे श्यामसुन्दर, हम तुम्हारी दासियाँ हैं और जो कहोगे वही करेंगी — पर हे धर्मज्ञ, हमारे वस्त्र लौटा दो, नहीं तो हम राजा से कह देंगी।”

व्रत की पवित्रता पर प्रभु के वचन

प्रभु बोले: “यदि तुम सचमुच मेरी दासियाँ हो और मेरा कहना मानोगी, तो यहाँ आकर उज्ज्वल मुस्कान के साथ अपने वस्त्र ले लो।” शीत से काँपती और लज्जा से सिकुड़ती कुमारियाँ अपने हाथों से स्वयं को ढँकती हुई जल से बाहर आईं। उन्हें लज्जा से ऐसा अभिभूत देखकर मानो उनमें प्राण ही न रहे हों, और उनके शुद्ध भाव से प्रसन्न होकर प्रभु ने वस्त्र अपने कन्धे पर रखे और स्नेहभरी मुस्कान के साथ उनसे कहा।

यूयं विवस्त्रा यदपो धृतव्रता

व्यगाहतैतत्तदु देवहेलनम् ।

बद्ध्वाञ्जलिं मूर्ध्न्यपनुत्तयेऽहसः

कृत्वा नमोऽधोवसनं प्रगृह्यताम् ॥ १९ ॥

yūyaṁ vivastrā yad apo dhṛta-vratā vyagāhataitad tad u deva-helanam baddhvāñjaliṁ mūrdhny apanuttaye 'mhasaḥ kṛtvā namo 'dho-vasanaṁ pragṛhyatām

अर्थ: “व्रत धारण किए हुए तुमने वस्त्रहीन होकर जल में स्नान किया, यह जल के देवता का अपमान हुआ। उस दोष को दूर करने के लिए सिर पर अञ्जलि बाँधकर प्रणाम करो, और फिर अपने अधोवस्त्र ग्रहण करो।” (स्कन्ध 10, अध्याय 22, श्लोक 19)

अच्युत के ये वचन सुनकर व्रजकुमारियों ने समझा कि वस्त्रहीन स्नान उनके व्रत में एक चूक थी। व्रत की पूर्ति की कामना से उन्होंने प्रभु को प्रणाम किया — क्योंकि वे ही उस व्रत और समस्त पुण्यकर्मों के साक्षात् फल हैं, और वे ही सब दोषों को हर लेते हैं। उन्हें इस प्रकार झुका देखकर और उनके प्रणाम से प्रसन्न होकर करुणामय देवकीनन्दन ने उनके वस्त्र लौटा दिए।

कोई दोष नहीं, केवल प्रियसंग का आनन्द

अब गोपियों का हृदय देखिए। छली गई, लज्जा छिनी गई, उपहास हुआ, खिलौनों की तरह नचाई गई, वस्त्र भी हर लिए गए — फिर भी उनके मन में रोष का लेश तक न उठा।

दृढं प्रलब्धास्त्रपया च हापिताः
प्रस्तोभिताः क्रीडनवच्च कारिताः ।
वस्त्राणि चैवापहतान्यथाप्यमुं
ता नाभ्यसूयन् प्रियसङ्गनिर्वृताः ॥ २२ ॥

*dr̥ḍham̐ pralabdhās trapayā ca hāpitāḥ prastobhitāḥ kṛīḍana-vac ca kārītāḥ vastrāṇi
caivāpahṛtāny athāpy amuṁ tā nābhyasūyan priya-saṅga-nirvṛtāḥ*

अर्थ: यद्यपि वे भली-भाँति ठगी गई, लज्जा से वञ्चित की गई, उनकी हँसी उड़ाई गई और उन्हें खिलौनों की तरह चलाया गया, यद्यपि उनके वस्त्र भी हर लिए गए, तो भी उन्होंने उनमें दोष नहीं देखा, क्योंकि वे अपने प्रियतम के संग से आनन्दित थीं। (स्कन्ध 10, अध्याय 22, श्लोक 22)

वस्त्र पहनकर भी वे वहाँ से हिल न सकीं; लजीली दृष्टि श्रीकृष्ण पर टिकी रही, चित्त हर लिए गए थे, और प्रियतम-मिलन के आनन्द ने उन्हें वहीं थामे रखा।

दामोदर का वरदान

प्रभु जानते थे कि उन्होंने किस संकल्प से यह व्रत किया था — उनके चरणों के स्पर्श की लालसा से। जिन्होंने एक बार माता की रस्सी से अपनी कमर बँधवा ली थी — प्रेम से बँधे वे दामोदर — अब उनसे बोले: “हे साध्वियो, मेरी पूजा का तुम्हारा संकल्प मुझे ज्ञात है, और मैंने उसका अनुमोदन किया है। इसलिए वह सत्य होने योग्य है।”

न मय्यावेशितधियां कामः कामाय कल्पते ।
भर्जिता क्वथिता धानाः प्रायो बीजाय नेशते ॥ २६ ॥

na mayy āveśita-dhiyāṁ kāmāḥ kāmāya kalpate bharjitā kvathitā dhānāḥ prāyo bijāya neśate

अर्थ: “जिनकी बुद्धि मुझमें लीन है, उनकी कामना आगे और सांसारिक कामना को जन्म नहीं देती, जैसे भुने या उबाले हुए धान प्रायः फिर बीज बनकर अंकुरित नहीं हो पाते।” (स्कन्ध 10, अध्याय 22, श्लोक 26)

“कुमारियो, ब्रज लौट जाओ,” उन्होंने कहा। “तुम्हारा मनोरथ सिद्ध हुआ। आने वाली रात्रियों में तुम मेरे साथ विहार करोगी, क्योंकि इसी के लिए तुम सतियों ने देवी की आराधना का यह व्रत किया था।” शुकदेवजी आगे बोले: प्रभु की ऐसी आज्ञा पाकर, मनोकामना पूर्ण हुई कुमारियाँ उनके चरणकमलों का ध्यान करती हुई ब्रज की ओर मुड़ीं — और बड़ी कठिनाई से ही वहाँ से हट सकीं।



प्रभु का वरदान पाकर और पूजा के सफल होने का आश्वासन लेकर कुमारियाँ उनके चरणकमलों का ध्यान करती हुई ब्रज लौटती हैं, बड़ी कठिनाई से वहाँ से हटती हुई (श्लोक 24-28)।

प्रभु ने यह विचित्र और कोमल लीला क्यों रची? वे पूजा की पूर्ति के लिए आए थे, और उसे पूर्ण किया बालू की प्रतिमा या भेंटों ने नहीं, बल्कि स्वयं समर्पण ने — सिर पर बँधी अञ्जलि, झुका हुआ शरीर, अहंकार का हर आवरण उनके सामने उतार दिया गया। व्रत ने श्रीकृष्ण को पति रूप में माँगा था; प्रभु ने उस कामना को स्वीकार किया, उसका अनुमोदन किया, और उसका सच्चा स्वरूप प्रकट कर दिया। जो कामना उनमें उँडेल दी जाए वह भुना हुआ धान है — वह फिर सांसारिक तृष्णा की अनन्त फसल नहीं उगा सकती। प्रभु के सामने उनकी लज्जा एक शुद्धि थी, और उन पर दोष न लगाना इस बात का चिह्न कि उनमें केवल लालसा नहीं, भक्ति पक चुकी थी।

दूसरों के लिए जीने वाले वृक्ष

फिर शुकदेवजी राजा को ग्रीष्म के एक दिन की ओर ले गए। श्रीकृष्ण बलराम और ग्वालबालों के साथ गौओं को चराते हुए वृन्दावन से बहुत दूर निकल गए थे। ग्रीष्म के सूर्य की प्रचण्ड किरणों में उन्होंने देखा कि वृक्ष अपनी छाया से उनके ऊपर छत्र की भाँति तने हैं, और वे अपने सखाओं की ओर मुड़े — स्तोककृष्ण, अंशु, श्रीदामा, सुबल, अर्जुन, विशाल, ऋषभ, तेजस्वी, देवप्रस्थ और वरूथप — और बोले: “देखो इन महाभाग प्राणियों को। ये केवल दूसरों के लिए जीते हैं। आँधी, वर्षा, धूप और पाला स्वयं सहकर ये सब कुछ हमसे दूर रखते हैं।”

अहो एषां वरं जन्म सर्वप्राण्युपजीवनम् ।

सुजनस्येव येषां वै विमुखा यान्ति नार्थिनः ॥ ३३ ॥

aho eṣāṁ varam janma sarva-prāṇy-upajīvanam su-janasyeva yeṣāṁ vai vimukhā yānti nārthinaḥ

अर्थ: “अहो! इन वृक्षों का जन्म कितना श्रेष्ठ है, जो समस्त प्राणियों का जीवन धारण करते हैं। इनके पास आया कोई भी याचक निराश नहीं लौटता, जैसे किसी सज्जन के द्वार से कोई खाली हाथ नहीं लौटता।” (स्कन्ध 10, अध्याय 22, श्लोक 33)

अपने पत्तों, फूलों और फलों से, उन्होंने आगे कहा, अपनी छाया, जड़ों, छाल और लकड़ी से, अपनी सुगन्ध, गोंद, भस्म, कोयले और कोंपलों से ये वृक्ष सबकी कामनाएँ पूरी करते हैं। फिर उन्होंने सखाओं को वह शिक्षा दी जिसे वृक्ष अपने जीवन से जीते हैं।

एतावज्जन्मसाफल्यं देहिनामिह देहिषु ।

प्राणैरर्थैर्धिया वाचा श्रेयआचरणं सदा ॥ ३५ ॥

etāvaj janma-sāphalyam dehinām iha dehiṣu prāṇair arthair dhiyā vācā śreya-ācaraṇam sadā

अर्थ: “इस संसार में देहधारियों के जन्म की सफलता बस इतनी ही है कि वे अपने प्राणों, धन, बुद्धि और वाणी से सदा दूसरे प्राणियों का कल्याण करें।” (स्कन्ध 10, अध्याय 22, श्लोक 35)



ग्रीष्म की प्रचण्ड धूप में श्रीकृष्ण ग्वालबालों को वे वृक्ष दिखाते हैं जो उन्हें छाया देते हैं, और उन प्राणियों की प्रशंसा करते हैं जो केवल दूसरों के लिए जीते हैं और आँधी, वर्षा, धूप और पाला सहते हैं ताकि दूसरे बचे रहें (श्लोक 29-35)।

यमुना के जल पर

यों कहते हुए प्रभु कोंपलों, फलों और फूलों के गुच्छों से झुकी डालियों वाले वृक्षों के बीच से निकलकर यमुना पर पहुँचे। वहाँ गौओं को मीठा, शीतल और स्वास्थ्यकर जल पिलाया गया, फिर ग्वालबालों ने स्वयं जी भरकर वह स्वादिष्ट जल पिया। उन्होंने पशुओं को तट के उपवन में स्वच्छन्द चरने दिया, और फिर भूख से व्याकुल होकर वे श्रीकृष्ण और बलराम के पास आए और उनसे बोले — वे वचन जिनसे अगला अध्याय आरम्भ होता है।



पत्तों, फलों और फूलों से झुकी डालियों के बीच से निकलकर प्रभु गोधन को यमुना पर लाते हैं; गौएँ शीतल मीठा जल पीती हैं, फिर ग्वालबाल, और तब भूख उन्हें श्रीकृष्ण और बलराम के पास ले जाती है (श्लोक 36-38)।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. प्रभु को अर्पित व्रत प्रभु तक पहुँचता है। कुमारियों ने कात्यायनी से नन्दनन्दन को माँगा (श्लोक 4), और स्वयं श्रीकृष्ण उनकी पूजा पूर्ण करने आए (श्लोक 8)। सच्ची भक्ति जिस भी पवित्र द्वार से प्रवेश करे, उन्हीं तक पहुँचती है।
2. वे समर्पण माँगते हैं, और जितना लेते हैं उससे अधिक लौटाते हैं। उन्होंने जो मुद्रा चाही — सिर पर अञ्जलि और प्रणाम (श्लोक 19) — वह पूर्ण शरणागति की मुद्रा है। उन्होंने वस्त्र लिए; लौटाए वस्त्र, वरदान और स्वयं को।
3. भक्त प्रियतम में दोष नहीं देखता। छली और छेड़ी गई गोपियों ने उनसे रोष नहीं किया (श्लोक 22)। जो प्रेम प्रभु की लीला से आहत नहीं होता, वही पूर्णतः उनका है।
4. श्रीकृष्ण में लगी कामना बाँधने की शक्ति खो देती है। भुने धान की तरह, जो अंकुरित नहीं होता, प्रभु में लीन लालसा सांसारिक तृष्णा में नहीं बढ़ती (श्लोक 26)। भक्ति हृदय को दबाती नहीं; उसे प्रभु की ओर मोड़ देती है।
5. जीवन केवल परोपकार में सफल होता है। वृक्ष धूप और आँधी सहते हैं ताकि दूसरों को आश्रय मिले (श्लोक 33), और प्रभु इसी को देहधारी जीवन की सार्थकता कहते हैं — प्राण, धन, बुद्धि और वाणी सब प्राणियों के कल्याण में लगे हों (श्लोक 35)।

एक भक्तिमय चिन्तन

इस अध्याय में दो दृश्य साथ-साथ रखे हैं — हेमन्त का एक प्रभात जहाँ कुमारियाँ बालू से देवी गढ़ती हैं, और ग्रीष्म की एक दोपहर जहाँ एक बालक वृक्षों की ओर संकेत करता है — और दोनों में एक ही सत्य चमकता है। गोपियों ने प्रभु को सब कुछ दे दिया था, और उन्होंने वह एक वस्तु माँगी जो अब भी रोकी हुई थी: उनका अभिमान, उनका अन्तिम आवरण। वृक्ष भी सब कुछ देते हैं — पत्ता, फल, छाया, अपनी भस्म तक — और प्रभु उनके जन्म को श्रेष्ठ कहते हैं। जिसकी वन में वे प्रशंसा करते हैं, उसी को तट पर उभारते हैं: ऐसा प्रेम जो अपने लिए कुछ नहीं

रखता। हम प्रायः कुमारियों की तरह अपनी छोटी समझ से गढ़ी इच्छा लिए उनके पास आते हैं। वे उसका तिरस्कार नहीं करते; उसे ग्रहण कर, शुद्ध कर, उससे कहीं बड़ा कुछ लौटाते हैं जिसे माँगना हम जानते भी न थे। और जब संकोच हो कि वे हमसे कितना कुछ उतारने को कह रहे हैं, तब हम उनके कन्धे पर रखे वस्त्रों और उस मुस्कान को याद कर लें जिसके साथ उन्होंने वे लौटा दिए।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज एक ऐसा मौन सेवा-कर्म करें जिसमें आप अपने लिए कुछ न रखें — कोई उपकार, कोई दान, कोई कोमल वचन — और उसे मन-ही-मन प्रभु को वैसे अर्पित करें जैसे वृक्ष अपनी छाया अर्पित करते हैं। आरम्भ से पहले ब्रज की कुमारियों की भाँति सिर के ऊपर अञ्जलि बाँधकर प्रणाम करें और प्रार्थना करें कि हृदय में जो भी कामना शेष है वह केवल उन्हीं की ओर मुड़ जाए। फिर धीरे-धीरे जपें: ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

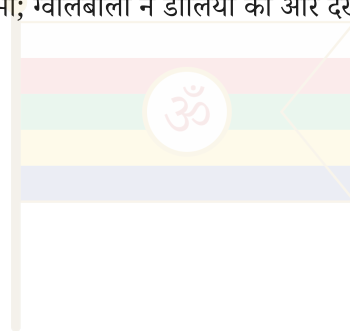
उपसंहार

दशम स्कन्ध का यह बाईसवाँ अध्याय मासभर की प्रार्थना, पवित्र चपलता के एक प्रभात और वृक्षों के नीचे ग्रीष्म के एक उपदेश को एक ही शिक्षा में पिरो देता है: प्रभु शुद्ध हृदय से आने वालों की पूजा को पूर्ण करते हैं, और पूर्णतः दूसरों के लिए जिया गया जीवन ही सचमुच फलता है। ब्रज की कुमारियों ने प्रणाम किया और अपने वस्त्र भी पाए और उनका वचन भी; ग्वालबालों ने डालियों की ओर देखा और सब कालों के लिए एक पाठ पाया। हम दोनों से यह सीख लें कि उनसे कुछ भी न रोकेँ।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जगाए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।



संदर्भ एवं आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी), दशम स्कन्ध (पूर्वार्ध), द्वाविंश अध्याय।
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़्डम • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी एवं लिप्यन्तरण सहित दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश रूप में प्रस्तुत हैं। यह किसी एक प्रकाशक के सतत अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी प्रकाशक के संबंध या समर्थन का दावा नहीं किया गया है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-10-chapter-22-krishna-steals-the-garments-of-the-gopis-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

